क्यूबाई संकट को जिस तरह हल किया गया था उस पर कुछ सवाल

शिवदास घोष

क्यूबाई संकट को जिस तरह हल किया गया था उस पर कुछ सवाल

क्यूबा में रॉकेट तैनात करने के फैसले से लेकर, साम्राज्यवादी साजिशों का पर्याप्त पर्दाफाश किये बिना और अमेरिका की डाकेजनी की नीति का कोई प्रतिरोध किये बिना जल्दबाजी में इन रॉकेटों को वहां से हटा लेने तक के मामलों से जुड़े 1962 के क्यूबाई संकट को ख्रुश्चेव नेतृत्व ने जिस तरह से निपटाया, उसने दुनिया भर के लोगों और कम्युनिस्ट हलकों में अनेक तरह के भ्रम पैदा कर दिये थे। इस मसले की आलोचनात्मक जांच-परख करते हुए यह लेख शांति आन्दोलन के क्रांतिकारी महत्व और अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवादी आन्दोलन में मतभेदों को हल करने के सही नजरिये व कार्यपद्धति पर बल देता है

साम्राज्यवाद अवश्यंभावी तौर पर युद्ध को जन्म देता है—लेनिन द्वारा प्रतिपादित यह नियम क्या आज की बदली हुई अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में भी कार्यकारी है? युद्ध का खतरा अब कहां तक वास्तविक है? विश्व साम्राज्यवाद की तुलनात्मक ताकत व कमजोरी क्या है? विश्व शांति के सवाल पर कम्युनिस्टों का नजरिया क्या होना चाहिए? क्या शांति को ही अपने आप मे ध्येय माना जाये या इसे औपनिवेशिक व अर्द्ध औपनिवेशिक देशों में साम्राज्यवाद-विरोधी राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों और बड़े पूंजीवादी देशों में क्रांतिकारी संघर्षों को तेज करने के काम के साथ जोड़ा जाये? आज की बदली हुई परिस्थिति में क्या शांतिपूर्ण तरीके से पूंजीवाद से समाजवाद में जाना संभव है? क्या संसदीय रास्ता शांतिपूर्ण समाजवादी क्रांति के विभिन्न रूपों में से एक है? क्या बुर्जुआ लोकतंत्र के एक अंग, संसद को जन इच्छा के सच्चे औजार में तब्दील किया जा सकता है? इन सब सवालों और युद्ध व शांति, पूंजीवादी और समाजवादी व्यवस्थाओं के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति

और पूंजीवाद से समाजवाद में संक्रमण से संबंधित कुछ अन्य सवालों पर विश्व साम्यवादी खेमे में विगत कुछ समय से गंभीर मतभेद उभर रहे थे तथा विभिन्न देशों की कम्युनिस्ट पार्टियां अभी भी आपस में एकता और दोस्ती का वातावरण बनाये रखते हुए इन सब सवालों पर अपने-अपने अभिमत की अपने-अपने ढंग से व्याख्या कर रही थीं। लेकिन इस बात से हम इनकार नहीं कर सकते कि क्यूबाई संकट को ख्रुश्चेव ने जिस ढंग से हल किया उसको लेकर ये मतभेद अभूतपूर्व कटुता और आपसी दोषारोपण के साथ जग जाहिर हो गये थे जो कि साम्राज्यवादियों के लिए एक बड़ी खुशी की बात थी।

यह तो बगैर कहे ही स्पष्ट है कि क्यूबाई संकट पर ख्रुश्चेव से असहमति रखने वालों समेत प्रत्येक मार्क्सवादी-लेनिनवादी मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में विश्वयुद्ध को रोकने और विश्व शांति को बरकरार रखने की परम आवश्यकता को समझता है। इस बात पर भी दो राय नहीं हो सकती कि युद्ध की विभीषिकाओं व विध्वसों से मानवता की रक्षा करने का फर्ज मुख्यत: समाजवादी शांति खेमे का ही बनता है। यह समझने के लिए किसी विशेष ज्ञान की जरूरत नहीं है कि साम्यवाद की तो बात दूर रही, यहां तक कि समाजवाद भी ताप-नाभिकीय युद्ध से भस्म हुई दुनिया की राख पर फल-फूल नहीं सकता। फिर भी कम्युनिस्टों का बहुत बड़ा न सही पर एक अच्छा-खासा हिस्सा क्यूबाई संकट के हल करने के तरीके पर ख्रुश्चेव से सहमत क्यों नहीं है? समाजवादियों के उस हिस्से के बारे में जिस में से कुछ ने अपनी क्रांतियों का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया है और अपने-अपने देशों में समाजवाद का निर्माण कर रहे हैं, यह शिकायत करना कि वे युद्ध उन्मादी हो गये हैं और अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को युद्ध के जरिये हल करना चाहते हैं, उनका खुला अपमान है। यह सोचना एकदम गुस्ताखी होगी कि वे मेहनतकश वर्ग के क्रांतिकारी संघर्ष की रणनीति व रण कौशल तथा युद्ध व शांति के सवाल पर मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन के सैद्धांतिक विश्लेषणों से पूर्णत: अनभिज्ञ हैं। केवल एक न सुधारा जा सकने वाला अहंकारी व्यक्ति ही ऐसा सोच सकता है। यह निष्कर्ष निकाल

लेने का कोई भी वैध आधार नहीं है कि विश्व साम्यवादी आन्दोलन में नेतृत्वकारी कम्युनिस्ट पार्टी के स्थान को हथियाने के प्रयास में वे आमतौर पर सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और खासतौर पर ख्रुश्चेव को बदनाम करने निकल पड़े हैं। ख्रुश्चेव और पूर्वी यूरोपीय देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों के उनके समर्थक, जिन्होंने अपनी पार्टी कांग्रेसों में अपने विरोधियों की खुलकर भर्त्सना की थी, अगर अपने विरोधियों के साथ सैद्धांतिक मतभेदों को ठीक-ठीक और सुनिर्दिष्ट तौर पर निर्धारित करते और अपने अभिमत की सटीकता को सिद्ध करते तो उनका प्रत्येक व्यक्ति ने समर्थन किया होता। लेकिन यह वाजिब रास्ता अपनाना तो दूर रहा, उल्टे उन्होंने अपने विरोधियों के मुंह में वे शब्द ठूंसने उचित समझे, जो उन्होंने कभी कहे ही नहीं थे और न ही वे कहना चाहते थे तथा उन पर बेबुनियाद इलजाम लगाये गये, जिनमें से कुछ का तो ऊपर जिक्र किया ही जा चुका है।

आइए, हम सर्वप्रथम दोनों परस्पर विरोधी धड़ों में मतभेदों को दिखायें। ख्रुश्चेव के विरोधियों का तर्क यह नहीं है कि सोवियत संघ को क्यूबा से रॉकेट नहीं हटाने चाहियें थे और उल्टे केरेबियन में सशक्त सैन्य कार्यवाही के द्वारा अमेरिकी जंगखोर साम्राज्यवादियों को सबक सिखाना चाहिए था। वे क्यूबा से रॉकेट हटाने के सोवियत निर्णय का पूरी तरह समर्थन करते हैं। क्यूबा में रॉकेट स्थापित करने के निर्णय से लेकर साम्राज्यवादियों की साजिश का पर्याप्त पर्दाफाश किये बिना और डाकेजनी की अमेरिकी नीति का कोई प्रतिरोध किये बिना उन्हें वहां से हड़बड़ी में हटा लेने तक के निर्णय सहित जिस तरह से यह सारा मामला निपटाया गया, उस पर वे एतराज करते हैं। प्रत्येक अमन-पसंद व्यक्ति ख्रुश्चेव के इस विश्लेषण से सहमत होगा कि ''नजदीक से देखने पर अब रूपक के तौर पर कहें तो दुनिया ताप-नाभिकीय अस्त्रों से ठसाठस भरे हुए बारूदघर में रह रही है।'' और यह कि ''अन्तर्राष्ट्रीय तनाव का सबसे संगीन मामला था केरेबियन संकट''। इस पर दो राय नहीं हो सकती कि ऐसी संकट की घड़ी में कोई भी उतावला कदम सोवियत

समाजवादी गणराज्य और संयुक्त राज्य अमेरिका को सचमुच के युद्ध में ले जाता, जिसके फलस्वरूप क्यूबा में भारी तबाही मचती। इस व्यावहारिक विचार से जांचने-परखने पर और साथ ही साथ मानवता को युद्ध से बचाने की समाजवादी शांति खेमे की प्रधान जिम्मेदारी के मद्देनजर क्यूबा से रॉकेट हटाने के सोवियत निर्णय का कोई भी व्यक्ति समर्थन किये बिना नहीं रह सकता। लेकिन यह इस विवाद पर विराम नहीं लगा देता, कई सवाल अभी भी अनुत्तरित रह जाते हैं। हम इन सवालों को ख्रुश्चेव और उनके समर्थकों के सामने रखना चाहते हैं और उन सभी से इन सवालों के साफ जवाब देने का निवेदन करते हैं ताकि दुनिया भर के कम्युनिस्ट वहां पर रॉकेट स्थापित करने के निर्णय से लेकर उनको हटाने तक के निर्णय सहित जिस तरह से इस क्यूबाई मामले को निपटाया गया, वह सही था या गलत-इसे समझने में समर्थ हो सकें।

ख्रुश्चेव ने अपने अभिमत के बचाव में अन्तर्राष्ट्रीय मसलों के समाधान के लिए पारस्परिक रियायतों और समझौतों की जरूरत पर बल दिया था। यह सच है कि विभिन्न राष्ट्रों के बीच अनसुलझे मसलों का शांतिपूर्ण समाधान, बातचीत के द्वारा पारस्परिक रियायतों के लेन देन और समझौते के सिद्धांत को अपनाने की अपेक्षा रखता है। शब्दों में पारस्परिक मगर अमल में एकतरफा की बजाय वास्तव में ही पारस्परिक होने के लिए, रियायतें दोनों तरफ से बराबर होनी चाहिएं। क्यूबाई संकट के समाधान के इस विशेष मामले में साम्राज्यवादियों को क्या-क्या रियायतें दी गयी हैं और उनके बदले में उनसे क्या-क्या रियायतें प्राप्त की गयी हैं? सोवियत संघ ने क्यूबा से बैलेस्टिक रॉकेटों को हटा लिया है और आई एल-28 विमानों को निकाल लिया है, जबकि बदले में अमेरिका ने महज वचन दिया है कि वह क्यूबा पर हमला नहीं करेगा और अपने सहयोगियों को भी ऐसी कार्रवाई करने से रोकेगा। वस्तुतः समझौते की शर्तें हर प्रयोजन-उद्देश्य के लिहाज से ऐसी हैं कि उन्होंने सोवियत संघ द्वारा पारस्परिक रियायतें नहीं, बल्कि एकतरफा रियायतें दिया जाना आवश्यक बना दिया है। अमेरिका द्वारा दी गयी

तथाकथित रियायतें जबकि कोई रियायतें ही नहीं हैं। क्योंकि अमेरिका के लिए विश्व जनमत व संयुक्त राष्ट्रसंघ के अधिकार पत्र को खुलेआम नजरअंदाज करके एक स्वतंत्र और संयुक्त राष्ट्र संघ (यूएनओ) के सदस्य देश क्यूबा पर हमला करना और आक्रमण को जारी रखना लगभग असंभव है। अगर ऐसा हमला संभव होता, तो अमेरिका क्यूबा के क्रांतिविरोधियों को अमेरिका की मुख्य भूमि पर संगठित करने और उन्हें क्यूबा के वर्तमान शासन का तख्ता पलट करने के लिए क्यूबा भेजने का घुमाव-फिराव वाला रास्ता अपनाने की बजाय यह हमला बहुत पहले ही कर लेता। अमेरिका क्यूबा पर हमला नहीं करेगा, यह वचन देने से बहुत पहले ही समाजवादी क्यूबा संयुक्त राज्य अमेरिका के युद्धखोर साम्राज्यवादी हलकों की इच्छा के विरुद्ध और इनके खिलाफ अपना वजूद कायम रखे हुए था–यह हकीकत ही इस वचन की निरर्थकता साबित कर देने के लिए काफी है। इसलिए, जब वास्तविकता यह है कि मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में अमेरिका आक्रमण से होने वाले संदेहास्पद लाभ की तुलना में भारी पड़ने वाली अपूर्णीय क्षति उठाये बिना ऐसा एक आक्रमण छेड़ और इसे जारी रख ही नहीं सकता, तो संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा दिये गये इस वचन को किसी भी तरह रियायत नहीं कहा जाता सकता कि वह क्यूबा पर हमला नहीं करेगा। फिर धरती पर कौन ऐसा है, जिसने चाहा था कि ख्रुश्चेव अमेरिका से यह वचन ले? इसके अलावा क्या इस वचन की कोई वास्तविक कीमत है? क्या इस बात की कोई गारंटी है कि अमेरिका ईमानदारी से इसका पालन करेगा? उल्टे, क्या इतिहास हमें ऐसी अनगिनत मिसाल नहीं देता, जब साम्राज्यवादी ताकतों द्वारा किये गये अनाक्रमण-समझौतों का साम्राज्यवादियों द्वारा अपने साम्राज्यवादी मंसूबों को आगे बढ़ाने के लिए बड़ी बेपरवाही से उल्लंघन किया गया। (ध्यान रहे, वचन, अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता और आधिकारिक अहमियत रखने वाला कोई समझौता नहीं होता; यह ज्यादा से ज्यादा एक शरीफ आदमी का वादा है, अगर एक कट्टर साम्राज्यवादी को शरीफ आदमी कहा जा सकता है, तो जिस राष्ट्र का अध्यक्ष यह वादा करता है उस राष्ट्र की इसे न कोई

आधिकारिक मंजूरी मिली होती है और न ही उसे निभाने की कोई आधिकारिक जिम्मेदारी अपरिहार्य बनती है।)

अगर ख्रुश्चेव को फिर भी लगता है कि कनेडी द्वारा किये गये वायदे की कोई कीमत है तो क्या हम उनसे पूछ सकते हैं कि उन्होंने जिस रास्ते का अनुसरण किया, क्या वही एकमात्र रास्ता था? क्या क्यूबाई मामले को निपटाने का और कोई बेहतर रास्ता नहीं था? प्रतिरोध का कोई आभास तक भी दिये बिना साम्राज्यवादियों की मांगों को तुरंत मान लेने के बजाय साम्राज्यवादी चाल का भंडाफोड़ करने, शांति व समाजवादी ताकतों को कारगर रूप से लामबंद करने और अमेरिका के अनिच्छुक हाथों से कोई सचमुच की रियायत छीन लेने जैसे कि तुर्की से उसके रॉकटों को हटवाना या सोवियत संघ के आसपास साम्राज्यवादियों द्वारा स्थापित फौजी अड्डों को खत्म कराना या कम से कम फिदेल कास्त्रो द्वारा 28 अक्तूबर के भाषण में की गयी मांग के अनुसार ग्वाटेनामो खाड़ी से अमेरिकी नौसैनिक अड्डों की निकासी आदि के लिए क्या सोवियत युद्धपोतों को मोर्चे पर डटे रहने और रॉकेटों को और भी कुछ समय तक यथावत लगे रहने के आदेश नहीं दिये जा सकते थे?

उपरोक्त सवालों के अलावा और सवाल भी हैं। प्राव्दा ने 7 जनवरी को प्रकाशित एक लेख में पूछा था : ''इस बात से कौन मार्क्सवादी-लेनिनवादी सहमत होगा कि साम्यवाद की जीत का रास्ता ताप-नाभिकीय युद्ध के जरिये में ही निहित है?'' एकदम सही बात है; कोई भी कम्युनिस्ट इस त्रुटिपूर्ण धारणा की हिमायत करने को तैयार नहीं हो सकता कि विश्व साम्यवादी समाज कायम करने के लिए ताप-नाभिकीय युद्ध एक जरिया है। लेकिन क्या ऐसी कोई कम्युनिस्ट पार्टी है, जो इस सिद्धांत की वकालत करती है? जहां तक हमारी जानकारी और सूचना है ऐसी कोई भी कम्युनिस्ट पार्टी नहीं है। फिर प्राव्दा द्वारा यह सवाल उठाने का उद्देश्य ख्रुश्चेव द्वारा जिस तरह से क्यूबाई सकंट को हल किया गया था, उससे पूरी तरह सहमत न होने वालों के विचारों को तोड़-मरोड़ने के उद्देश्य के सिवा और क्या हो सकता है? उपरोक्त लेख में *प्राव्दा* में आगे लिखा था: ''जो क्यूबाई संकट के समाधान करने के तरीके की आलोचना करते हैं,

वे असल में शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति को ही नकारते हैं।'' इस वक्तव्य में कतई कोई तर्क नहीं है। क्योंकि एक समाजवादी देश की विदेश नीति की एकमात्र सही आम लाइन के रूप में पूंजीवादी और समाजवादी व्यवस्थाओं के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति को पूरी तरह मानते हुए और क्यूबा से रॉकेट हटाने के सोवियत निर्णय तक का समर्थन करते हुए भी केरेबियन में संकट को हल करने के तरीके पर कोई भी व्यक्ति ख्रुश्चेव से तर्क संगत रूप से असहमत हो सकता है। अफसोस की बात है कि हमारे सोवियत कॉमरेड क्यूबाई संकट के शांतिपूर्ण समाधान का विरोध करने (कोई भी कम्युनिस्ट पार्टी शांतिपूर्ण समाधान के विरोध में नहीं है) और जिस तरीके से क्यूबाई संकट को शांतिपूर्ण ढंग से हल किया गया, उसका विरोध करने में फर्क को देख पाने में असमर्थ रहे हैं। इसके अलावा, हम ख्रुश्चेव को विरोधाभासी वक्तव्य देते हुए पाते हैं। सुप्रीम सोवियत को दी गयी अपनी रिपोर्ट में वे कहते हैं : ''लेकिन हमने अपने हथियार क्यूबा में उस पर हमले से उसे बचाने के लिए भेजे थे।'' क्या क्यूबा पर हमले को रोकने के लिए अमेरिका के इतने नजदीक स्थित क्यूबा में चंद रॉकेट स्थापित करने जरूरी थे? क्यूबाई संकट के हल हो जाने के तुरंत बाद के अपने वक्तव्य में ख्रुश्चेव ने स्वीकारा था कि क्यूबा में स्थापित चंद रॉकेट तो क्या उससे संख्या में दस गुना रॉकेट भी क्यूबा पर अमेरिकी हमले को होने से रोकने के लिए प्रर्याप्त नहीं थे। पूर्वी जर्मनी के श्रमिकों के सामने 19 जनवरी को दिये गये अपने भाषण में उन्होंने कहा था: ''रॉकेट स्थापित करने के लिए क्यूबा सुविधाजनक जगह नहीं है। जब इलाके का सवाल आता है, तो रॉकेट तैनात करने के लिए हमारे पास क्यूबा से और बेहतर जगह हैं। आज तकनीक गारंटी देती है कि रॉकेटों द्वारा कोई भी दूरी पाटी जा सकती है।'' अगर ऐसा है और दरअसल है भी ऐसा ही, तो फिर क्यूबा को ही रॉकेट स्थापित करने के लिए क्यों चुना गया था? रॉकेट स्थापित करने के लिए क्यूबा की इलाकाई दिक्कतों को ध्यान में रखा जाना चाहिए था और वहां कोई रॉकेट भेजना ही नहीं चाहिए था। क्या ख्रुश्चेव ने पहले से यह नहीं देखा कि अमेरिकी साम्राज्यवादी एक-न-एक दिन क्यूबा में रॉकेटों की

मौजूदगी को जान जायेंगे, उस पर बावेला मचायेंगे और क्यूबा के खिलाफ अपनी आक्रामक कार्रवाइयां तेज करने के लिए इसे बहाने के तौर पर इस्तेमाल करेंगे? अगर उन्होंने इसे नहीं देखा, तो वे अदूरदर्शिता के दोषी हैं। दूसरी तरफ, अगर उन्होंने यह देख लिया था, तो रॉकेट स्थापित करते समय अथवा उसके बाद उन्होंने संभावित साम्राज्यवादी चालों को निरस्त और नाकाम करने के लिए क्या कदम उठाये? क्या अमेरिका द्वारा की गयी घाटबंदी के खिलाफ सोवियत युद्धपोतों को आगे बढ़ने का आदेश देना और किसी भी संभावित घटना का सामना करने के लिए तैयार हो जाना उनका उतावलापन नहीं था? फिर एक बार जब रॉकेट स्थापित हो गये और सोवियत युद्धपोतों को घाटबंदी के खिलाफ आगे बढ़ने के आदेश दे दिये गये, तो अमेरिका की समुद्री डाकेजनी की नीति का पर्दाफाश करने की कोई कोशिश किये बगैर ही रॉकेट लगाने के पहले दिये गये उस आदेश के *तुरंत* बाद ही रॉकेटों को हटाने और युद्ध पोतों को वापस लौट आने का पुनः आदेश देना क्या *सही* था? घटनाओं ने सिद्ध कर दिया कि न तो सोवियत संघ ने पहले से यह कल्पना की थी कि अमेरिकी साम्राज्यवादियों की संभावित चालें क्या होंगी और न ही उसने इन चालों को रोकने व नाकाम करने की कोई कार्ययोजना बनायी थी। वह महज गफलत में ही पकड़ा गया। क्यूबा में इलाकाई दिक्कतों और संभावित साम्राज्यवादी पलट चालों का ध्यान रखे बिना रॉकेट स्थापित करने, सोवियत युद्ध पोतों को अमेरिका द्वारा थोपी गयी घाटबंदी के खिलाफ आगे बढ़ने के आदेश देने और जैसे ही वे अमेरिकी बेड़े के सम्पर्क में आये, उन्हें वापस आ जाने के पुनः आदेश देने, क्यूबा पर अमेरिका की हमले की धमकी से पहले ही जल्दबाजी में वहां से रॉकेट हटा लेने जैसे अविचारित और अनियोजित कृत्य विवेकशीलता व दूरदर्शिता से नहीं, बल्कि आवेश से संचालित और सुनियोजित योजना के अनुरूप नहीं, बल्कि परिस्थिति की विवशता से किये गये दुस्साहसिक कृत्यों से किस तरह अलग हैं।

लेकिन ख्रुश्चेव ने इतने फूहड़ ढंग से काम क्यों किया? हमारी सुचिंतित राय में यह युद्ध और शांति के सवाल पर अमेरिकी रणनीति व रवैये के उनके गलत अध्ययन के ही कारण हुआ।

खुश्चेव ने अपने ताप-नाभिकीय युद्ध के भय विकार के कारण गलती से यह सोच लिया कि केरेबियन में अमेरिकी रणनीति का उद्देश्य साम्राज्यवादी खेमे और समाजवादी खेमे, जिनमें आज विश्व सामाजिक ताकतें ध्रुवीकृत हैं, के बीच सर्वग्रासी ताप-नाभिकीय युद्ध छेड़ना है और इसीलिए वे अपने खास अंदाज में किसी भी तरह से युद्ध को टालने और किसी भी कीमत पर शांति कायम रखने में पूरी तरह जुट गये। साम्राज्यवादी जानते हैं कि आर्थिक, राजनैतिक और सामरिक शक्ति के रूप में समाजवादी खेमा अब श्रेष्ठ खेमा है और मौजूदा शक्ति संतुलन के चलते दोनों खेमों के बीच एक तीसरा विश्वयुद्ध अगर वर्तमान में शुरू हो गया, तो यह विश्व साम्राज्यवादी औपनिवेशिक व्यवस्था की पूर्ण तबाही और विश्व समाजवाद की विजय ला देगा। इसलिए यह संदिग्ध है कि अमेरिका क्यूबाई संकट पैदा करके दोनों खेमों के बीच सर्वग्रासी ताप-नाभिकीय विश्वयुद्ध छेड़ना चाहता था। लेकिन सुनिश्चित बात यह है कि केरेबियन में अमेरिकी रणनीति का उद्देश्य सोवियत संघ के साथ आंशिक और स्थानीय युद्ध शुरू करना, भौगोलिक स्थिति की निकटता के कारण सामरिक गतिविधियों व रसद आपूर्ति की सुविधाजनक स्थिति का फायदा उठाना, सोवियत समाजवादी गणराज्य पर आंशिक व अस्थायी पराजय थोपना और कोरियाई युद्ध में और क्यूबा व दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में प्रतिक्रांति का नेतृत्व करने में अपनी खोयी हुई सैन्य प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त करना था। खुश्चेव द्वारा इस *स्थिति* से निपटने के गलत ढंग के कारण अमेरिका केरेबियन में सोवियत संघ से बिना युद्ध किये ही अपनी खोयी हुई सैन्य प्रतिष्ठा फिर से पाने में बहुत हद तक सफल रहा और अमेरिका यह छाप यानी प्रभाव छोड़ पाया कि अमेरिका की कठोर नीति और श्रेष्ठ सैन्य शक्ति के चलते सोवियत संघ पीछे हटने को विवश कर दिया गया है। यह प्रभाव ही गुट निरपेक्ष अफ्रीकी-एशियाई देशों की विदेश नीति का आंशिक तौर पर अमेरिका की तरफ हालिया झुकाव लाने और सभी पूंजीवादी देशों के युद्धबाज हलकों के गिरते हुए मनोबल को दोबारा ऊंचा उठाने के लिए जिम्मेदार है, जोकि विश्व शांति आन्दोलन, बड़े पूंजीवादी

देशों में क्रांतिकारी संघर्षों और औपनिवेशिक व अर्द्ध औपनिवेशिक देशों में राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों की वृद्धि, विकास व तेजी लाने में नुकसानदेह बात है।

हम इस बात को नहीं मानते कि सोवियत संघ क्यूबा के मामलों में साम्राज्यवादी धमकी के कारण पीछे हट गया। क्योंकि पीछे हटने के लिए कोई ठोस आधार ही नहीं है। इसलिए पीछे हटने का सवाल ही नहीं उठता। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि सोवियत संघ ने अमेरिका को स्थिति जितनी इजाजत देती थी, उससे कहीं ज्यादा रियायतें दे दी थी, जो सोवियत संघ द्वारा प्रायः एकतरफा रियायतें देने और बदले में अमेरिका द्वारा कोई भी रियायत न देने के बराबर थीं। बेशक, ख्रुश्चेव ऐसा नहीं सोचते। सोवियत के समक्ष अपनी रिपोर्ट में उन्होंने ऐलान किया था: ''क्यूबा पर सबसे कट्टर साम्राज्यवादी अपना ताप-नाभिकीय युद्ध का दांव खेलना चाहते थे, पर वे ऐसा नहीं कर सके। सोवियत संघ ने, शांति और समाजवाद की ताकतों ने यह दिखा दिया कि वे युद्ध के पैरोकारों पर शांति थोपने की स्थिति में हैं।'' आज की अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में यह एकदम सच है एक समाजवादी देश दुनिया के शांतिप्रिय लोगों के साथ एकजुट होकर एक विशेष युद्ध को होने से रोक सकता है और युद्ध उन्मादी साम्राज्यवादियों पर एक विशेष शांति थोप सकता है। मिस्र पर हमले को रोकने के लिए समाजवादी देशों की संयुक्त कार्यवाही के सामने आंग्ल-फ्रांसीसी-इजरायली तिकड़ी का पीछे हटना इस बात का ठोस उदाहरण है। लेकिन क्या क्यूबाई संकट को हल करने के तरीके को शांति और समाजवाद की ताकतों द्वारा युद्ध के पैरोकारों पर शांति थोपने की संज्ञा दी जा सकती है, जो संज्ञा ख्रुश्चेव ने दी थी? हम सोचते हैं कि इसे ऐसी संज्ञा नहीं दी जा सकती। इस बात से हम सहमत हैं कि क्यूबा पर युद्ध को टाल दिया गया। लेकिन हरेक युद्ध का टाला जाना युद्ध के पैरोकारों पर शांति थोपना नहीं होता। क्योंकि साम्राज्यवाद के सामने घुटने टेक कर या उसे रियायतें देकर अस्थायी तौर पर युद्ध टाला भी जा सकता है। कोई भी समझदार व्यक्ति ऐसे आत्मसमर्पण या ऐसी एकतरफा रियायतों को शांति और समाजवाद

की ताकतों द्वारा युद्ध के पैरोकारों पर शांति थोपना कभी नहीं मान सकता। कोई एक विशेष कार्रवाई जंगखोरों पर शांति थोपना है या नहीं, यह समझौते की शर्तों के अनुसार दी गयी और पायी गयी रियायतों की प्रकृति के आधार पर तय होता है। अगर क्यूबा से अपने रॉकेटों और आई एल-28 युद्ध विमानों को हटाने की सोवियत कार्रवाई के बदले अमेरिका को तुर्की से अपने रॉकेट हटाने या सोवियत संघ के आस-पास के अपने फौजी अड्डे समाप्त करने या कम-से-कम ग्वाटेनामो खाड़ी के अपने नौसैनिक अड्डे छोड़ने पर मजबूर कर देना खुश्चेव के लिए संभव होता, तो क्यूबा पर युद्ध को टालने को सही मायने में शांति और समाजवाद की ताकतों द्वारा युद्ध के पैरोकारों पर शांति थोपना कहा जा सकता था। चूंकि अमेरिका को एकतरफा रियायतें देकर और बदले में किसी भी रियायत का लाभ उससे लिये बगैर (हम पहले ही जिनकी चर्चा कर चुके हैं) युद्ध को टाला गया है, हम न तो इसे सही मायने में रियायत पाना कह सकते हैं और न ही युद्ध की ताकतों पर शांति थोपना। इसलिए इसमें अमेरिका के जंगखोर साम्राज्यवादी हलकों की खुशामद करने का तत्व निहित है, जिसकी न तो जरूरत थी और न ही कोई कारण।

सोवियत कॉमरेडों द्वारा यह बात बार-बार दोहरायी जा रही है कि जो लोग क्यूबा के मामले पर खुश्चेव के नजरिये के आलोचक हैं, वे भूल जाते हैं कि साम्राज्यवाद के ''परमाणु दांत'' हैं और इसलिए वे साम्राज्यवाद की ताकत और ताप-नाभिकीय विश्वयुद्ध के खतरे को कम करके आंकते हैं। यह सच नहीं है। हम अपने सोवियत कॉमरेडों को याद दिला दें कि उनके विरोधी नहीं, बल्कि खुद खुश्चेव ही कुछ समय पहले अपने इस दावे को सही सिद्ध करने के लिए कि साम्राज्यवाद अवश्यम्भावी तौर पर युद्ध को जन्म देता है—यह नियम अब अपनी वैधता नहीं रखता, इस थीसिस को सामने लेकर आये थे कि आज की बदली हुई अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में साम्राज्यवाद युद्ध छेड़ने में नाकाबिल है और इस प्रकार उन्होंने ही युद्ध छेड़ने की साम्राज्यवाद की ताकत को और युद्ध के खतरे को कम करके आंका था। जो क्यूबाई संकट को हल करने के

उनके तरीके के आलोचक हैं, उन्होंने तो युद्ध छेड़ने की साम्राज्यवाद की मारक क्षमता और आज युद्ध के व्याप्त इस सचमुच के खतरे को कभी कम करके नहीं आंका था और न आज कम करके आंकते हैं। यहां पर यह कहना संदर्भ से परे हो जायेगा कि आधुनिक युद्ध एक व्यक्ति के उतावलेपन का उतना नतीजा नहीं होते, जितना कि वे पूंजीवादी व्यवस्था के शोषण का नतीजा होते हैं और वे उनको नियंत्रित करने वाले नियमों के अनुसार रूप लेते हैं। व्यक्ति बेशक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, लेकिन वे कभी नियमों के ऊपर नहीं जा सकते। जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद का यह सिद्धांत ध्यान में रखता है और वैज्ञानिक ढंग से नियम के विकास का अध्ययन करता है, वह कभी भी न तो ताप-नाभिकीय विश्वयुद्ध के बारे में जल्दी से आतंकित होता है और न ही उसके खतरे से बेखबर रहता है।

यह हमें शांति के सवाल पर ले आता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कम्युनिस्ट लोग शांति के लिए लड़ने वाले योद्धा हैं न कि हर तरह के युद्ध के विरोधी निरे शांतिवादी। एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी हर मामले को क्रांति और प्रगति की जरूरत के नजरिये से देखता है और यही बात शांति के सवाल पर कम्युनिस्टों की समझ व नजरिये और शांतिवादियों के भ्रम के बीच सारे फर्क ला देती है। एक क्रांतिकारी के लिए शांति ही अपने आप में ध्येय नहीं है, एक स्वयंभू सत्ता नहीं है, हालांकि वह आज की अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में विश्व शांति को बनाये रखने के सर्वोच्च महत्व को समझता है। इसलिए वह न तो किसी भी और हर प्रकार की शांति का पक्षधर होता और न ही वह हर प्रकार के युद्ध का विरोधी होता है, वह सभी अन्यायपूर्ण युद्धों और दूसरे देशों की धरती पर कब्जा जमाने के आक्रामक युद्धों के खिलाफ होता है, लेकिन वह शोषणमूलक व्यवस्था से जन-मुक्ति के लिए किये जाने वाले मुक्ति युद्धों को समर्थन और प्रोत्साहन देता है। उसी तरह वह किसी भी कीमत पर शांति खरीदने के विचार और कृत्य शांतिवादिता के भी खिलाफ होता है। लेकिन जो शांति क्रांति को बढ़ने, विकसित होने और तेज होने में मदद करती है, उस शांति के लिए कृत संकल्प होकर लड़ता है। वर्तमान

के शांति आन्दोलन और विश्व शांति के सरंक्षण की क्रांतिकारी सार्थकता सही मायने में इस तथ्य में निहित है कि इनसे अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में वह अनुकूल फिजा पैदा हुई है और दरअसल पैदा कर दी गयी है, जो दूसरे देशों के अंदरूनी मामलों में साम्राज्यवादियों की दखलअंदाजी को नामुमकिन बना देती है। इस प्रकार से वह बड़े पूंजीवादी देशों और उनके गुलाम पूंजीवादी देशों में अपने-अपने दुश्मनों के खिलाफ विदेशी दखलअंदाजी से मुक्त क्रांतिकारी संघर्षों को चलाने में क्रांतिकारी ताकतों को मदद कर रही है। अतीत में जब किसी देश की क्रांतिकारी ताकतों को क्रांति को कामयाब करने के लिए न केवल देशी प्रतिक्रियावादी ताकतों, बल्कि विदेशी साम्राज्यवादी ताकतों को भी परास्त करना पड़ता था, अब इसके उलट शांति आन्दोलन की क्रांतिकारी सार्थकता व संभावना को नजरअदांज किये बगैर अगर उसे ठीक से संगठित-संचालित किया जाये, तो विदेशी साम्राज्यवादी दखलअंदाज को रोका जा सकता है और उससे क्रांति के मुख्य शत्रु को उसकी आरक्षित ताकतों से अलग-थलग किया जा सकता है। यह कोई छोटी उपलब्धि नहीं है, क्रांति के उद्देश्य के प्रति कोई मामूली योगदान नहीं है। इसलिए विश्व शांति के सरंक्षण और मौजूदा शांति आन्दोलन को और क्रांति तक की बलि चढ़ा कर किसी भी तरह से शांति को बनाये रखने के विचार-शांतिवादिता को एक दूसरे के साथ गड्डमड्ड नहीं करना चाहिए। शांति के लिए यह लड़ाई बड़े पूंजीवादी देशों में समाजवादी क्रांति और औपनिवेशिक व गुलाम देशों में राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन की लहरों की रफ्तार बढ़ाने के बहुत सारे जटिल क्रांतिकारी साधनों में से एक है। कोई भी मार्क्सवादी-लेनिनवादी जो आज के शांति आन्दोलन और विश्व शांति के संरक्षण के क्रांतिकारी महत्व को नजरअंदाज करता है, शांति को ही अपने आप में ध्येय समझता है और नतीजतन, शांति आन्दोलन व विश्व शांति के सवाल को तेज करने के काम से अलग-थलग करता है, वह शांतिवादिता का ही प्रचार करने का दोषी है और वस्तुतः साम्राज्यवाद की खुशामद करता है। वह अपनी तथाकथित शांति की धुन में बड़े पूंजीवादी देशों और गुलाम देशों में क्रांति व प्रगति की अग्रगति को रोकने की हद तक भी चला जाता है। और

तो और, वह यह देख पाने में भी असमर्थ हो जाता है कि ऐसे कृत्यों से वह न केवल क्रांति और प्रगति के उद्देश्य को, बल्कि विश्व शांति के उद्देश्य को भी गंभीर नुकसान पहुचाता है, जिनके महत्व के बारे में वह इतनी अधिक अनर्गल बातें करता है। क्योंकि विश्व शांति की अंतिम गारंटी साम्राज्यवादियों की युद्ध न छेड़ने की वचनबद्धता में निहित नहीं है, युद्ध टालने के लिए उन्हें अनावश्यक रियायतें देकर उनकी खुशामद करने में तो है ही नहीं, बल्कि मुख्यत: विश्व शांति आन्दोलन के विकास के साथ-साथ, उपनिवेशों व अर्द्ध उपनिवेशों में राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन और बड़े पूंजीवादी देशों में समाजवादी क्रांति के तीव्र व सफल होने में निहित है। युद्ध टालने के लिए साम्राज्यवाद को दी गयी अनावश्यक और एकतरफा रियायतों ने, जो कि असल में खुशामद करने के ही तुल्य हैं, हमेशा साम्राज्यवाद की युद्ध लिप्सा को भड़काया है, जिसका नतीजा उसके द्वारा नयी-नयी और ताजा मांगें रखे जाने में हो रहा है, जो अंतत: विश्व में यहां-वहां दूसरे देशों पर कब्जा करके हड़पने और भी ज्यादा नृशंस युद्ध छिड़ने की तरफ ले जा रही है।

सोवियत कॉमरेडों का यह आरोप भी उतना ही गलत है कि क्यूबाई संकट को जिस तरह से हल किया गया, उसका जो लोग समर्थन नहीं करते, वे पूंजीवादी और समाजवादी देशों के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धांत और व्यवहार में विश्वास नहीं करते। वे पूंजीवादी और समाजवादी देशों के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति में निश्चित रूप से विश्वास करते हैं और दरअसल उस पर अमल भी कर रहे हैं। वे जिस बात पर बल देना चाह रहे हैं, वह यह कि शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति को अमल में लाते समय और इस प्रकार का सहयोग विकसित करने का प्रयास करते समय किसी को भी इस मुगालते में नहीं रहना चाहिए कि साम्राज्यवाद अपनी नैसर्गिक प्रकृति को बदल लेगा और शांति, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का सच्चा पक्षधर बन जायेगा। समाजवादी देशों से साम्राज्वादी देश शांति और सहयोग की बात इसलिए नहीं कर रहे हैं कि उनकी नैसर्गिक प्रकृति में कोई बुनियादी बदलाव आ गया है, बल्कि इसलिए कर

रहे हैं कि यह परिस्थितिजन्य आवश्यकता है, अर्थात् समाजवादी खेमे की फौजी ताकत उनसे श्रेष्ठ है। अगर यह श्रेष्ठता चली जाती है, तो साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध छेड़ने का कोई भी मौका नहीं चूकेंगे। साम्राज्यवाद की नैसर्गिक जंगखोर प्रकृति की बात को बार-बार दोहराना आवश्यक है, क्योंकि हमें लगता है कि ख्रुश्चेव मानते हैं कि अमेरिका के शासक वर्ग को समझाबूझाकर मना लेना, उसे शांत करना और युद्ध के खतरे को टालना संभव है। (अगर हमारी यह व्याख्या गलत साबित हो जाये, तो हमें खुशी ही होगी) वरना सोवियत विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य अमेरिका की सद्भावना को अर्जित करने का प्रयास करने और किसी तरह इसके साथ समझौते पर पहुंचने के बजाय सबसे दुस्साहसी साम्राज्यवादी देश अमेरिका को इसके कम दुस्साहसी साथियों से अलग-थलग करना होता।

इस चर्चा का समापन करने से पहले हम अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट नेताओं से आपसी आरोप-प्रत्यारोप लगाने से बाज आने की अपील करते हैं, जिसमें अभी दोनों प्रतिस्पर्धी धड़े लगे हुए हैं। एक धड़ा दूसरे को ''कठमूल्लावादी'', ''छद्म क्रांतिकारी'', ''युद्ध के सिद्धांत में विश्वासी'', ''चंगेजखान की नीति के अनुयायी'' आदि करार देकर उसकी भर्त्सना कर रहा है, महज दूसरे धड़े के द्वारा खुद पर भी उसी तरह ''संशोधनवादी'', ''गद्दार'', ''साम्राज्यवाद के आगे घुटने टेकने की नीति के अनुयायी'' और न जाने क्या-क्या आरोप लगवाकर भर्त्सना किये जाने के लिए। यह गाली-गलौज आखिर हमारे किस मकसद को पूरा कर रहा है? क्या यह किसी भी तरह से उस जबर्दस्त वैचारिक भ्रम-भ्रांति को दूर करने में हमें सहयोग दे रहा है, जिससे इस समय विश्व साम्यवादी आन्दोलन रूबरू है? क्या यह एक-दूसरे के नजरियों को बेहतर ढंग से समझने में मदद करता है? यह सच है कि पार्टियों के बीच गंभीर मतभेद हैं। लेकिन ये मतभेद किस तरह से हल होंगे–गाली-गलौज का इस्तेमाल करके या सिद्धांतनिष्ठ आलोचना, आत्म-आलोचना चलाकर? क्या आलोचना, आत्मालोचना का लेनिनवादी सिद्धांत एक-दूसरे पर ऐसे अनापशनाप आरोप लगाने और एक-दूसरे पर गाली-गलौज की भाषा का इस्तेमाल करने की इजाजत देता है? कहावत है कि कठोर

शब्दों से हड्डियां नहीं चटकती यानी कोई लाभ नहीं होता। जिस रवैये की कम्युनिस्ट नेताओं से ज्यादा अपेक्षा की जाती है, उसकी कमी साफ नजर आती है। नजीजतन, हम पाते हैं कि प्रतिस्पर्धी पार्टियों के बीच के आपसी संबंधों और विभिन्न नेताओं के बीच व्यक्तिगत संबंधों में तनाव उत्पन्न करके ये कठोर शब्द मामलों को और भी पेचीदा बना दे रहे हैं। हमें लगता है कि वर्तमान सैद्धांतिक संकट को हल करने और मार्क्सवादी एकता को पुख्ता, पक्की और मजबूत बनाने के हित में विभिन्न कम्युनिस्ट पार्टियों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन बुलाने की जरूरी तैयारियां बगैर किसी विलम्ब के शुरू कर दी जानी चाहिएं। क्योंकि वर्तमान में जारी इस बहस-मुबाहसे के रुझान के चलते सम्मेलन बुलाने में और देरी करना मतभेदों को दूर करने के बजाय महज उन्हें और भी बढ़ा देगा। यह बेहूदा दलील कि विभिन्न कम्युनिस्ट पार्टियों का सम्मेलन साम्यवादी खेमे में खुली फूट को और भी तेजी से बढ़ा देगा-गंभीरता से ध्यान देने लायक नहीं है। चूंकि जो लोग वर्तमान में समाजवादी खेमे में चल रहे वैचारिक मतभेदों की वजह से संगठन में फूट पड़ने की आशंका व्यक्त करते हैं, वे या तो विभिन्न कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच एकता बरकरार रखने और सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद का झंडा बुलंद रखने की अपनी जिम्मेदारी निभाने में असमर्थ हैं या फिर वे येन-केन प्रकारेण एकता बरकरार रखने के ही पक्षधर हैं। किसी भी सूरत में अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवादी आन्दोलन के वर्तमान नेताओं को उनकी विवेकहीन एकतरफा हरकतों से मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन, स्तालिन और असंख्य शहीदों की धरोहर को नष्ट न करने दें, जिन्होंने साम्यवाद के लिए अपनी जान न्योछावर कर दी थी।

सोशलिस्ट यूनिटी में 1 फरवरी
1963 को पहली बार प्रकाशित।